Arthapanchakam

अर्थपञ्चकम्

Document Information

Text title : Arthapanchakam

File name : arthapanchakam.itx

Category : raama, panchaka

Location : doc_raama

Proofread by : Mrityunjay Rajkumar Pandey

Description/comments : Hanumatsanhita Hanumad-AgastyasaMvAde

Latest update : June 9, 2024

Send corrections to : sanskrit at cheerful dot c om

This text is prepared by volunteers and is to be used for personal study and research. The file is not to be copied or reposted without permission, for promotion of any website or individuals or for commercial purpose.

Please help to maintain respect for volunteer spirit.

Please note that proofreading is done using Devanagari version and other language/scripts are generated using **sanscript**.

June 9, 2024

sanskritdocuments.org

Arthapanchakam

अर्थपञ्चकम्

श्रीअगस्त्य उवाच -
कथं श्रीरामे सम्प्रीतिर्जायते पवनात्मज ।
गृहदारकुटुम्बेषु! वैराग्यञ्च कथं भवेत् ॥ १॥
अर्थ - श्रीअगस्त्यजी बोले, हे पवनात्मज! भगवान् श्रीराममें सम्यक् प्रीति किस प्रकार उत्पन्न हो और गृह, पत्नी तथा परिवारसे वैराग्य कैसे हो? यह आप अनुग्रह करके मुझे बताएँ ।

श्रीहनुमान् उवाच -
कुम्भोद्भवपरश्रेयः शृणुष्व ते वदाम्यहम् ।
गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयञ्च सर्वदा ॥ २॥
अर्थ - श्रीहनुमानजी बोले हे कुम्भोद्भव अगस्त्य ! सुनिये मैं आपको परम कल्याणकारक तत्त्वका उपदेश करता हूँ । यह तत्त्व सर्वकालमें गोपनीय है, गोपनीय है, गोपनीय है ।

ज्ञेय -
ज्ञेयं प्राप्यस्य रामस्य रूपं प्राप्तुस्तथैव च ।
प्राप्त्युपायं फलञ्चैव तथा प्राप्तिविरोधि च ।
अर्थपञ्चकमेतत्तु सङ्क्षेपेण वदामि ते ॥ ३॥
अर्थ - प्राप्य (प्राप्त करने योग्य)श्रीरामचन्द्रजीके स्वरूपको, प्राप्ता (प्राप्ति करने वाला)जीवात्माके स्वरूपको तथा श्रीरामचन्द्रजीकी प्राप्तिके उपाय, फल एवं प्राप्तिके विरोधी इन पाँच तत्त्वोङ्को जानना चाहिए । मैं तुमसे इन्हीं पाँच अर्थोङ्को सङ्क्षेपमें कहता हूँ ।

प्राप्य -
दिव्यानन्तगुणः श्रीमान् दिव्यमङ्गलविग्रहः ।
षड्गुणैश्वर्यसम्पन्नो मनोवाचामगोचरः ॥ ४॥

अर्थ - असीम करुणा वरुणालय श्रीरामचन्द्रजी अप्राकृत अनन्त (अपरिमित)गुण वाले हैं । श्रीजीके साथ नित्य सम्बन्ध रखने वाले हैं । दिव्यमङ्गल विग्रहको धारण करने वाले हैं । षड्गुण और ऐश्वर्यसे सम्पन्न हैं । मन, वाणीके अविषय हैं ।

वेदवेद्यः सर्वसाक्षी सर्वोपास्यः स्वतन्त्रकः ।
नित्यानां निजभक्तानां भोग्यभूतः श्रियः पतिः ॥ ५॥
अर्थ - भगवान् श्रीरामचन्द्रजी वेदोङ्के द्वारा ज्ञेय हैं, सभीके साक्षी हैं । सभीके उपास्य तथा स्वतन्त्र हैं । वे पराम्बा श्रीसीताजीके पति हैं । नित्य तथा सभी निज भक्तोङ्के भोग्य हैं ।

ब्रह्मविष्णुमहेशानां कारणं सर्वव्यापकः ।
मूलं तुह्मवताराणां धर्मसंस्थापकः परः ॥ ६॥
अर्थ - परब्रह्म श्रीराम ब्रह्मा, विष्णु और महेशके कारण और सर्वव्यापक हैं, सभी अवतारोङ्के मूल धर्मसंस्थापक तथा पर हैं ।

द्विभुजश्चापभृच्चैव भक्ताभीष्टप्रपूरकः ।
वैदेहीवल्लभोर्नित्यं कैशोरे वयसि स्थितः ।
एवं भूतश्च ज्ञातव्यो रामो राजीवलोचनः ॥ ७॥
अर्थ - दो भुजाओं वाले धनुर्धर श्रीराम भक्तोङ्के अभीष्टकी पूर्ति करने वाले हैं । वे विदेहतनयाके प्रिय तथा सदा किशोरावस्थामें रहने वाले हैं । इस प्रकार रक्त कमलके समान नेत्रों वाले श्रीरामको जानना चाहिए ।

प्राप्ता -
स्थूलसूक्ष्मकारणतो भिन्नं कोषाच्च पञ्चकात् ।
जाग्रत्स्वप्नाद्यवस्थानां साक्षिभूतं तु सर्वदा ॥ ८॥
अर्थ - जीवका स्वरूप स्थूल, सूक्ष्म और कारण इन शरीरत्रय तथा पचञ्कोशोंसे भिन्न है । यह जाग्रत तथा स्वप्नादि अवस्थाओङ्का साक्षी तथा सर्वदा विद्यमान रहने वाला है ।

चिदानन्दमयं नित्यं दिव्यविग्रहसंयुतम् ।
अखण्डैकरसञ्चैव कैशोरे वयसिस्थितम् ॥ ९॥
द्विभुजं सत्त्वसम्पन्नमीशसेवाप्रयोजनम् ।
प्रभोर्नियाम्यं शेषत्वं ज्ञातव्यं स्वस्वरूपकम् ॥ १०॥
अर्थ - जीवात्मस्वरूप चिदानन्दमय, नित्य, प्रभु का नियाम्य तथा शेष है । यह शुद्ध सत्त्वमय, किशोरावस्था में स्थित, अखण्डैकरस दो भुजाओं वाले दिव्य शरीर

से युक्त है । ईश्वर की सेवा करना इसका प्रयोजन है, इस प्रकार अपने स्वरूपको जानना चाहिए ।

प्राप्ति के उपाय -
सर्वभूतदयाचैव सर्वत्र समदर्शनम् ।
अन्यत्रानिन्दनं चैव स्वेशे स्नेहाधिकं तथा ॥ ११॥
गुरावीश्वरबुद्धिश्च तदाज्ञापरिपालनम् ।
स्वेशस्य तज्जनानाञ्च सेवनं मायया विना ॥ १२॥
प्रभोः कृपावलम्बित्वं भोक्तव्यं तत्समर्पितम् ।
सच्छास्त्रेषु च विश्वासः प्राप्त्युपायमिहोच्यते ॥ १३॥
अर्थ - सभी प्राणियों के प्रति दया करना, सभी में समदर्शन करना, किसी की निन्दा न करना, अपने इष्ट में अधिक स्नेह करना, गुरु में ईश्वरबुद्धि रखना, उनकी आज्ञा का सम्यक् प्रकार से पालन करना, अपने आराध्य और उनके भक्तों की कपट के बिना सेवा करना, प्रभु की कृपा का आश्रय लेना, भगवत्समर्पित पदार्थों का सेवन करना, ये इस ग्रन्थ में प्राप्ति के उपाय कहे जाते हैं ।

फल -
प्रारब्धं परिभुज्याथ भित्वा सूर्यादि मण्डलम् ।
प्रकृतेर्मण्डलं त्यक्त्वा स्नात्वा तु विरजाम्भसा ॥ १४॥

सवासनं देहद्वयं विसृज्य विरजो भवत् ।
अतिवेगेन तां तीर्त्वा प्राप्य साकेतकं तथा ॥ १५॥
प्रविश्य राजमार्गेण सप्तावरणसंयुतम् ।
नानारत्नमयं दिव्यं श्रीरामभवनं शुभम् ॥ १६॥
तत्र श्री भरताद्यैश्च सेव्यमानं सदा प्रभुम् ।
विराजमानं वैदेह्या रत्नसिंहासने शुभे ॥ १७॥
स्वभावनया श्रीरामं प्राप्य सर्वसुखप्रदम् ।
परानन्दमयो भूत्वावस्थानं फलमुच्यते ॥ १८॥
अर्थ - जीवात्मा स्वकृतभक्ति (रामाकारवृत्ति)से अपने आराध्य प्रभु का साक्षात्कार करके, प्रारब्ध कर्म को भोगकर, देहत्यागकर, सूर्यादिमण्डलों का भेदन करके, प्रकृति की सीमा का त्याग करके, विरजा नदी के जल से स्नान करके, वहाँ वासना के सहित कारण शरीर और सूक्ष्म शरीर को छोडकर, निर्मल होकर, अतिवेग से विरजा को पारकर, अप्राकृत दिव्य साकेत धाम को प्राप्त करके, राजमार्ग के द्वारा सप्त आवरणों से युक्त, नानारत्नों से निर्मित, अलौकिक और शुभ जगन्नियन्ता प्रभु

के भवन में प्रवेश करके, वहाँ श्रीभरतादि के द्वारा सदा सेवित, शुभरत्नसिंहासन में वैदेही के साथ विराजमान, सभी को सुख प्रदान करने वाले करुणामूर्ति श्रीरामचन्द्र को प्राप्त करके, अत्यन्त आनन्दमय होकर रहना फल कहा जाता है ।

प्राप्ति के विरोधी -
अनात्मन्यात्मबुद्धिस्तुस्वात्मशेषित्वभावना ।
भगवद्दास्यवैमुख्यं तदाज्ञोल्लङ्घनं तथा ॥ १९॥
ब्रह्मेशेन्द्रादिदेवानामर्चनं वन्दनादिकम् ।
असच्छास्त्राभिलाषश्चसच्छास्त्रस्यावमाननम् ॥ २०॥
मर्त्यसामान्यभावेन गुर्वादौ नातिगौरवम् ।
स्वातन्त्र्यं चाप्यहङ्कारो ममकारस्तथैव च ॥ २१॥
द्वादशीविमुखत्वं च ह्यकृत्यकरणं तथा ।
ज्ञेयं विरोधिरूपं तु स्वस्वरूपस्य सर्वदा ॥ २२॥
अर्थ - अनात्मा में आत्मबुद्धि करना, अपने को शेषी समझना, श्रीभगवान् के प्रति दासभाव से विमुख रहना, श्रीभगवान् की आज्ञा का उल्लङ्घन करना, ब्रह्मा-शिव तथा इन्द्रादि देवताओं की अर्चना और वन्दनादि करना, असत् शास्त्रों की अभिलाषा करना, सत् शास्त्रों की अवहेलना करना, सामान्य मनुष्यभाव करके श्रीगुरु आदि में अति गौरव न करना, अपनी स्वतन्त्रता, अहन्ता-ममता, एकादशी-उपवास से विमुख रहना तथा शास्त्र निषिद्ध कर्मों को करना ये सभी सर्वकाल में अपने अन्तर्यामी ब्रह्मस्वरूपकी प्राप्ति के विरोधी हैं । इन सबको जानना चाहिए ।

एवं तत्त्वपरिज्ञानादाचार्यानुग्रहेण हि ।
तत्क्षणाज्जानकीनाथे प्रीतिर्नित्याभिजायते ॥ २३॥
अर्थ - इस प्रकार महान् आचार्य के अनुग्रह से उक्त प्राप्य आदि पाँचों तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करने से उसी क्षण श्रीजानकीनाथ में नित्य प्रीति हो जाती है ।

- इति श्री हनुमत्संहितायां हनुमदगस्त्यसंवादे षष्ठोध्यायान्तर्गते अर्थपञ्चके श्रीमज्जनकनन्दिनी रघुनन्दनार्पणमस्तु ॥ ६॥

Proofread by Mrityunjay Rajkumar Pandey

Arthapanchakam

pdf was typeset on June 9, 2024

Please send corrections to *sanskrit@cheerful.com*